मोहन राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अंतर्सबंध

गीता कुमारी खटीक

शोधार्थी, हिंदी विभाग

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

मो. 9828742616

''मेरी अधिकांश कहानियाँ सम्बन्धों की यन्त्रणा को अपने अकेलेपन में झेलते लोगों की कहानियाँ हैं, जिनमें हर इकाई के माध्यम से उनके परिवेश को अंकित करने का प्रयत्न है। यह अकेलापन समाज से कटकर व्यक्ति का अकेलापन नहीं, समाज के बीच होने का अकेलापन है और उसकी परिणति भी किसी तरह की 'सिनिसिज्म' में नहीं, झेलने की निष्ठा में है। व्यक्ति और समाज को परस्पर विरोधी, एक दूसरे से भिन्न और आपस में कटी हुई इकाइयाँ न मानकर यहाँ उन्हें एक ऐसी अभिन्नता से देखने का प्रयत्न है, जहाँ व्यक्ति समाज की विड़म्बनाओं का और समाज व्यक्ति की यन्त्रणाओं का आईना है।''[1]

ऐसे विचारों के धनी मोहन राकेश का जीवन भी अकेलेपन में बीता। उनकी कहानियों में अकेलेपन की जो वेदना दिखाई देती है। वह उनका भोगा हुआ यथार्थ हैं। दो विवाह करने के बाद भी उनके जीवन का अकेलापन दूर नहीं हो सका। उस अकेलेपन की वेदना उन्हें हमेशा बनी रही। उन्हीं के शब्दों में – ''मुझे घर चाहिये अन्ना, घर। मुझे जिन्दगी में और सब कुछ मिला है, सिर्फ एक घर ही नहीं मिला। मैं कहाँ–कहाँ इसके लिए नहीं भटका? क्या–क्या इसके लिए नहीं किया? लेकिन पता नहीं क्यों घर नाम की चीज मुझसे हमेशा रूसवा रही। दो बार मैंने इसे पाने का अपने में विश्वास भरा और दोनों ही बार मुझे खुद ही उससे भाग जाना पड़ा.........। क्या तुम मेरे लिए एक ऐसा घर बना सकोगी? जो मेरे, सिर्फ मेरे, अनुकूल ही हो। मैं बहुत दुःखी आदमी हूँ अन्ना। एक बहुत ही थका हुआ आदमी हूँ। मैं चाहता हूँ कि मुझे तुम सम्हाल लो, मुझे और मेरे घर को।''[2]

लगातार दो विवाह सम्बन्धों की असफलता ने उनके जीवन में न ठहरने वाला बहाव उत्पन्न कर दिया जो उन्हें अपने साथ बहाता चलता था। राकेश जी ने कई बरसों तक खानाबदोशी की जिन्दगी बिताई। वे एक ऐसा घर और ऐसी पत्नी चाहते थे जो उन्हें वहाँ बाँधकर रख सके, और उनके जीवन का अकेलापन दूर कर सके। वे अपने असफल वैवाहिक जीवन से थक चुके थे। उन्हें एक भरे पूरे घर की तलाश थी। पहले दो असफल विवाह ने

उन्हें 'घर' शब्द से ही दूर कर दिया था। ये उनके जीवन की विडम्बना थी कि वे हमेशा अकेलेपन से गुजरे और इस अकेलेपन की कसक उन्हें हमेशा बनी रही।

उनके अकेलेपन की कसक उनकी कहानियों में भी दिखाई देती है। जिनमें 'एक और जिन्दगी', 'मिस पाल', 'चौगान' आदि कहानियाँ है। 'एक और जिन्दगी' कहानी उनके जीवन का प्रतिनिधित्व करती हुई दिखती है। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने अपने पहले असफल वैवाहिक जीवन को उकेरा है। प्रकाश की पत्नी बीना व बच्चे पलाश के माध्यम से अपनी पत्नी शीला और नीत के जीवन को चित्रित किया है। शीला पढ़ी–लिखी थी, तथा वह मोहन राकेश से ज्यादा कमाती थी। उसे लगता था कि वह स्वतंत्र नारी है, हर श्रेणी में उनसे श्रेष्ठ है। अपने अहंकार के कारण मोहन राकेश को नीचा दिखाने का प्रयत्न करती थी। उसके इस व्यवहार से उनके रिश्ते में बिखराव आने लगा। एक पति–पत्नी के रिश्तें में जो स्नेह व प्रेम होता है वह स्नेह व प्रेम जुड़ नहीं पाया। वे अकेलेपन से जुझते रहे। परेशान होकर उन्होंने अपनी पत्नी शीला से तलाक चाहा तो वह अनबन के बावजूद भी तलाक देने को तैयार नहीं थी। राकेश जी लिखते हैं– ''आज सवा साल बाद – बल्कि सोलह महीने के बाद इस दौरान जिन्दगी के सबसे बड़े द्वन्द्व से गुजरा हूँ – मैंने पिछले छह साल की घुटन को समाप्त करना चाहा है – जिस औरत से मैं प्यार नहीं कर सकता, उसके साथ मैं जिन्दगी किस तरह काट सकता हूँ? आज वह मुझ पर वासना से चलित और इंसानियत से गिरा हुआ होने का आरोप लगाती है – क्योंकि मैंने उससे तलाक चाहा है – क्योंकि मैं अपने अभाव की पूर्ति के लिए एक ऐसे व्यक्ति का आश्रय चाहता हूँ, जो मुझे खींच सकता है, और बाँधकर रख सकता है।''[3]

मोहन राकेश और उनकी पत्नी के बीच स्नेह एवं लगाव का रिश्ता नहीं जुड़ पाया। वे पत्नी के अहंवादी होने के कारण मानसिक कुंठाओं से घिर गए। उन्हें इस रिश्ते में घुटन महसुस होने लगी। तब उन्होंने यह रिश्ता तोड़ना चाहा तो उनकी पत्नी ने उन्हें ही गिरा हुआ इंसान बताया। रिश्ते में होने के बाद भी वे अकेले हो गए। यही व्यथा उनकी कहानी 'एक और जिन्दगी' में दिखाई देती है – ''ब्याह के कुछ महीने बाद से ही पति – पत्नी अलग रहने लगे थे। ब्याह के साथ जो सूत्र जुड़ना चाहिए था, वह जुड़ नहीं सका था। दोनों अलग–अलग जगह काम करते थे और अपना–अपना ताना–बाना बुनकर जी रहे थे। लोकाचार के नाते साल–छः महीने में कभी एक बार मिल लिया करते थे। वह लोकाचार ही इस बच्चे को दुनिया में ले आया था................।''[4] कहानी में पत्नी बीना आत्म–निर्भर है इसी कारण पति–पत्नी के अहं में टकराहट होने लगती है व पति–पत्नी के वैवाहिक सम्बन्धों में कटुता आने लगती है।

मोहन राकेश का पहला विवाह असफल होने पर उन्होंने अपने मित्र मोहन की बहन से दूसरा विवाह किया, लेकिन दूसरे विवाह के पश्चात भी वे अकेलेपन के दर्द से उभर नहीं पाए और उनका दूसरा विवाह सम्बन्ध भी टूट गया। मोहन राकेश का दूसरा विवाह सम्बन्ध टूटने पर कमलेश्वर लिखते हैं कि – ''मुझे लगा कि राकेश ने दूसरी बीबी को छोड़कर बड़ी, कमीनी, हरकत की है, पर भीतर ही भीतर में स्थितियों को सुलझा रहा था, और रह–रहकर

कीर्तिनगर का वह मकान मेरी आँखों के सामने घूम जाता था, जहां राकेश ने कई बार सुस्थिर तरीके से रहने और जमकर लिखने की योजना बनाई थी। उस घर में मैं उससे कई बार मिला और हर बार मुझे यही लगा कि उस घर में सुख–शान्ति नहीं, एक बेहद खौफनाक सन्नाटा रेंग रहा है।''[5]

दूसरे विवाह पश्चात उन्हें पता चला कि उनकी पत्नी पुष्पा मानसिक रूप से विक्षिप्त थी। वह हमेशा कोई–न–कोई तमाशा करती थी तथा उनके कार्यों में उलझनें पैदा करती थी। पत्नी की इस मानसिक स्थिति से उत्पन्न मानसिक तनाव से बचकर वह खुद घर छोड़कर भाग निकले तथा दर–दर की ठोकरें खाने को मजबूर हो गए। घर छोड़ने के कुछ महीने बाद कमलेश्वर जी से सारी बातें स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा था – ''कमलेश्वर स्थिति यह थी कि मैं आत्महत्या कर लेता। चार महीने से मांग–मांगकर कपड़े पहन रहा हूँ। सचमुच मैं जान दे देता।''[6]

'एक और जिन्दगी' कहानी में प्रकाश का पहला विवाह असफल होने के पश्चात् प्रकाश अपने मित्र कृष्ण जुनेजा की बहन निर्मला से विवाह करता है। लेकिन उसे भी विवाह पश्चात पता चलता है कि उसके साथ धोखा हुआ है, निर्मला मानसिक रूप से विक्षिप्त थी। वह अजीबो–गरीब हरकते करती थी – ''तुम मेरे भाई से क्या पूछने गए थे?'' वह बाल बिखेरकर 'देवी' का रूप धारण किए हुए कहती है – ''तुम बीना की तरह मुझे भी तलाक देना चाहते हो? किसी तीसरी को घर में लाना चाहते हो? मगर मैं बीना नहीं हूँ। वह सती स्त्री नहीं थी। मैं सती स्त्री हूँ। तुम मुझे छोड़ने की बात मन में लाओगे तो मैं इस घर को जलाकर भस्म कर दूंगी। सारे शहर में भूचाल ले आऊंगी। लाऊ भूचाल? और बाँहें फैलाकर वह चिल्लाने लगती, आ..... भूचाल,आ–आ। मैं सती स्त्री हूँ, तो इस घर की ईट से ईट बजा दे। आ, आ, आ।''[7]

विवाह पश्चात पत्नी का जो सान्निध्य व स्नेह चाहिए वह उसे निर्मला से नहीं मिल पाता और अंत में वह निर्मला की मानसिक विक्षप्ति से उत्पन्न मानसिक तनाव के कारण घर छोड़ने पर मजबूर हो जाता है।

'मिस पाल' कहानी की नायिका भद्दी–काली, मोटी औरत है। उसकी यह कुरूपता उसे समाज और सहकर्मियों के बीच उपहास का पात्र बनाकर रख देती है। मिस पाल अपनी इस कुरूपता को छिपाने का प्रयत्न करती है, किन्तु यह प्रयत्न उसे और भी कुरुप बना देता है। इस कारण उसके सहकर्मी उसके रंग–रूप पर कई टिप्पणी करते रहते थे– ''क्या बात है मिस पाल, आज रंग बहुत निखर रहा है।''[7] आजकल मिस पाल पहले से स्लिम भी तो हो रही है।''[8] ''मिस पाल, इस नई कमीज का डिजाइन बहुत अच्छा है। आज तो गजब ढा रही हो तुम''[9] मिस पाल इन सब बातों से परेशान हो जाती और वहाँ से उठकर चली जाती है। ''मिस पाल को इस तरह की बाते दिल में चुभ जाती थी। जितनी देर दफ्तर में रहती, उसका चेहरा गंभीर बना रहता। दफ्तर से छुट्टी मिलने पर इस तरह मेज से उठती जैसे कई घंटे

की सजा भोगने के बाद छुट्टी मिली हो। दफ्तर से उठकर वह सीधी अपने घर चली जाती और अगले दिन सुबह दफ्तर के लिए निकलने तक वही रहती।''[10]

बचपन में माता–पिता और परिवार का प्यार ना मिल पाने की वजह से वह अपना घर छोडकर दिल्ली जैसे महानगर में अकेली नौकरी करती है। अपने सहकमिर्यों व समाज के लोगों के व्यंग्य से परेशान होकर आत्मकेन्द्रित हो जाती है। वह अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए संगीत और चित्रकला का सहारा लेती है,किंतु फिर भी वह अपना अकेलापन दूर नहीं कर पाती। वह अपने सहकर्मी रणजीत से बात करते हुए भी वह अकेलेपन में खोयी सी रहती है। वह कहती है – ''यह सब्जी मैंने परसो बनायी थी। हर रोज तो नहीं बना पाती हूँ। रोज बनाने लँगू तो बस खाना बनाने की ही हो रहूँ। और अम्....... अ....... अपने अकेली के लिए रोज बनाने का उत्साह भी तो नहीं होता। कई बार तो मैं सप्ताह भर का खाना एक साथ बना लेती हूँ और फिर निश्चिन्त होकर खाती रहती हूँ।''[11] वह अपने अकेलेपन से परेशान हो जाती है और स्वयं को ही समाज व सहकर्मियों के खिलाफ समझाती है कि ये लोग सभ्य नहीं है, मेरा पिंकी (कुत्ता) भी इनसे ज्यादा सभ्य है ।

''बस चली तो मिस पाल हाथ हिलाने लगी। दोनों खाली डिब्बे वह अपने हाथो में लिए हुए थी।''[12] मिस पाल का जीवन एकाकीपन व शून्यता बोध से भर चुका है। वह दोनों खाली डिब्बों की तरह अपने जीवन के खालीपन में अपने अस्तित्व को खोजती रह जाती है।

'चौगान' कहानी का नायक हैरी विलसन अभारतीय है। वह अपनी पत्नी लिजी से सम्बन्ध विच्छेद कर लंदन से भारत में आकर बस जाता है। दस साल अकेलेपन में गुजारने के बाद उसे अपना अकेलापन कष्टदायक लगने लगा – ''तब उसने आखिरी दिन काटने के लिए बगीचे की बूढ़ी नौकरानी की लड़की सन्तो को घर में रख लिया।''[13] हेरी स़न्तो के माध्यम से अपना अकेलापन दूर करना चाहता था,लेकिन दोनों की भाषा व उम्र में अधिक असमानता होने के कारण सन्तो उसके दर्द की गहराई को छू नहीं पाती। वह चाहता था कि सन्तो उसके बराबर हो जाए। उसकी बात समझ सके। वह उसके अकेलेपन को दूर कर सके। परन्तु जब कभी वह उसे अपने पिछले जीवन की बाते बताता ''तो सन्तो खिलखिलाकर हँस पड़ती और वह अवाक होकर उसके चेहरे की तरफ देखता रह जाता।''[14]

हेरी विलसन सन्तो के माध्यम से अपना अकेलापन भूल जाना चाहता था। लेकिन सन्तो को 'साहब जी' के अकेलेपन की बात समझ में नहीं आती है। अतः सन्तो उसे अपनी देह के सिवाय और कुछ नहीं दे पाती। अपने अंतिम दिनों में यह अकेलापन उसे और भी खलता है। कभी–कभी वह फटी आँखों से सामने दीवार की तरफ देखता रहता और कभी–कभी आँसुओं से तकियाँ भिगोता रहता।

''वस्तुतः यह अनुभव के अकेलेपन की कहानी है। यह अकेलापन ओढ़ा हुआ नहीं है, वरन् समाज और सामाजिकों के बीच रहते मनुष्य का अकेलापन है। जिसमें मानवीय सम्बन्धों की सूक्ष्मता जटिलता के स्तरों को स्पष्ट करती हुई आदमी को भीतर ही भीतर से छिलती

दिखाई देती है। 'हेरी विलसन' मरता तो बाद में है, किन्तु उससे पहले अकेलेपन के क्षणों में वह कितनी ही मौतें अपने भीतर जी चुका होता है।''[15]

अकेलेपन का यह दर्द आज भी जारी है। आधुनिकीकरण की होड़ सी लगी हुई है। इसी के चक्कर में व्यक्ति का जीवन यंत्र की भांति स्वयं को आधुनिक बनाने में लगा हुआ है जिससे समाज में व्यक्ति अकेला हो गया है। मानवीय सम्बन्ध टूट रहे है। महानगरीय जीवन में अकेलेपन की छटपटाहट में जीना आम बात बन गयी है। दिनों–दिन मानवीय सम्बन्धों में स्नेह हीनता बढ़ती जा रही है जो आज के समकालीन समाज एवं देश के लिए एक विमर्श का विषय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अनीता राकेश : *मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, फ्लैप से।
2. अनीता राकेश : *चन्द सन्तरे और,* राधाकृष्ण प्रकाशन, 1975, पृ. 75
3. मोहन राकेश : *मोहन राकेश की डायरी,* पृ. 35
4. अनीता राकेश : *मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, पृ. 278
5. कमलेश्वर : *मेरा हमदम मेरा दोस्त,* पृ. 11
6. वही
7. अनीता राकेश : *मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ,* राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, पृ. 282
8. वही, पृ. 11
9. वही
10. वही
11. वही, पृ. 17
12. वही, पृ. 27
13. वही, पृ. 196

14. वही

15. सुषमा अग्रवाल : *मोहन राकेश व्यक्तित्व व कृतित्व*, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 1986, पृ. 237